मिड डे मील

अल्पना मिश्र

मिड डे मील

यहाँ जो यह इमारत है, विशालकाय नहीं है, न ही समुद्र जैसा जल उसके सामने फैला है। यह टीन के छतवाले लंबे से बरामदेवाली जगह है, जिसमें बहुत छोटी सी खिड़की

वाला एक स्टोरनुमा कमरा भी जुड़ा है। आस-पास टूटे हुए पानी के पाइप के अलावा बरसात के मौसम का सबूत देते छोटे-छोटे हल्के गहरे, थोड़ा उथले गड्ढों में पानी भरा हुआ है। इसी पानी में हिलती हुई टीन की छत दिखाई पड़ती है। हल्की सी धूप निकल आती है तो पानी के भीतर टीन चमक उठता है। छोटे-छोटे बच्चे उसी पानी में 'छप्प' से पैर मारते हैं और चमकता टीन टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। कीचड़ में सना। कीचड़ से बना।

तो जो बहुत छोटी सी खिड़की वाला स्टोरनुमा कमरा है, उसमें एक कुर्सी और मेज भी पड़ी है। हेड मास्टर साहब इसी में बैठते होंगे, ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है। इसी में एक तरफ एक फोल्डिंग खाट भी पड़ी है। कहते हैं कि हेड मास्टर साहब की है। थक जाते हैं तो यही स्टोर शयनकक्ष बन जाता है। हालाँकि ऐसा कम ही होता है। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार 'चारपाई तो दिनभर पेड़ के नीचे पड़ी रहती है। मास्टर लोग उसी पर विराजमान रहते हैं।' या 'हेड मास्टर साहब पेड़वा के नीचे सोए रहते हैं।' जैसे कथन गवाह हैं कि खाट दिन भर पेड़ के नीचे रहती है और केवल छुट्टियों के समय ही वह स्टोर में विराजती है। और भी बहुत सामान पड़ा है इसमें। जैसे कि प्लास्टिक का मग, अचार की खाली शीशी, एक बड़ा सा एलुमिनीयम का ढक्कन रहित पतीला (कहते हैं कि इसका ढक्कन पहले कभी हुआ करता था। फिर किसी का दिल उस पर आ गया) एक जोड़ा हवाई चप्पल, जिसमें से एक का फीता उखड़ा हुआ है, थोड़े से कागज-पत्तर, जिन्हें एक ईंट के अद्धे से दबाकर रखा गया है, एक खँचिया (बाँस की बड़ी सी डलिया) इतिहास में बचे होने के सबूत की तरह है, जिसके ऊपर हमेशा-हमेशा के लिए एक झोला पड़ा रहता है। इस झोले पर किसी का नाम नहीं लिखा है। कोई भी इसका इस्तेमाल करने को स्वतंत्र है, लेकिन झोला बता रहा है कि उसका इस्तेमाल प्रायः नहीं किया जाता और यह भी कि वह कभी खँचिया के साथ ही आया रहा होगा। खँचिया में कभी कुछ सामान रहा होगा, जो अब नहीं है। अब कभी कहीं से कुछ आ जाता है तो उसी में पलट दिया जाता है जैसे कि भूजा, बैंगन, अमरूद वगैरह... फिर सब अपने-अपने हिस्से का बाँट कर ले जाते हैं। ऐसा पहले होता था। तब जब यह खँचिया और झोला आए थे। अब भूजा, बैगन, अमरूद वगैरह... नहीं रह गया।

अमरूद जैसी तमाम चीजें रुपये में बदल गईं। रुपया मतलब अमरूद, रुपया मतलब पपीता, रुपया मतलब खँचिया, रुपया मतलब स्कूल की फीस, रुपया मतलब मास्टर साहब की गुरु-दक्षिणा, रुपया मतलब रिजल्ट की खुशी, रुपया मतलब दूसरी कक्षा में प्रमोशन... सो क्या कहें लंबा समय हुआ, झोला खँचिया पर पड़ा रह गया है। कमरा खाली पड़ा है। कहने को कहा जाएगा। इतनी सारी चीजों के बावजूद पंखा नहीं है। न

बरामदे में, न कमरे में। लू वाली गर्मी हो या बरसात की उमस वाली। सरकार के बजट में पंखा नहीं आया तो नहीं है। कंपलेंट करनेवाले लगे रहते हैं जैसे कि पहले हेडमास्टर साहब। जब देखो, दो पेज का खर्रा लिखा और पठा दिया बी.एस.ए. साहब को। अब धीरे-धीरे जान गए हैं। खर्रा लिखने से क्या होगा। सशरीर उपस्थित होने का अलग अर्थ है।

खैर तो हेड साहब बाकी मास्टरों के साथ बरामदे के ठीक सामने पेड़ की छाया में स्टोरनुमा कमरे से लाए गए बड़े से पतीले में दलिया बना रहे थे। इस पर आश्चर्य कैसा? चपरासी अभी यहाँ नियुक्त नहीं हुआ था। मेहतर भी नहीं। हेड साहब उसी स्टोर से लाई गई कुर्सी पर बैठे थे। बाकी लोग खड़े थे। खड़े थे, पर उनके कुछ पीछे लकड़ी की एक बेंच उनके इंतजार में थी। यह बेंच ऐतिहासिक थी। सामान्य तौर पर उसे पानवाले की कह सकते थे। पान-गुमटी पीपल के पेड़ के जरा-सा आगे थी। पीपल कापेड़ जरा-सा स्कूल के मैदान में और आधा सड़क की तरफ था। स्कूल का मैदान बहुत छोटा था। शायद कभी भवन-निर्माण जैसा कोई आयोजन हो तो यह केवल पीपल के पेड़ के नीचे भर रह जाएगा।

या हो सकता है कि पीपल का पेड़ भी कट कर जगह बना दे। तब भी 'स्कूल के मैदनवा में' 'पिपरा के पेड़वा के निचवा' जैसे वाक्य प्रचलन में रहेंगे। तो उसी पीपल के पेड़ के जरा-सा आगे पानवाले ने लकड़ी की एक बेंच, जो कि बारिश की फफूँद से जगह-जगह काली पड़ने जैसी बदरंग हो गई थी, गुमटी के बगल में, यानी कि पीपल के पेड़ के नीचे रख दी थी। यह मामूली बेंच नहीं थी। इसका एक इतिहास था। यह युद्ध में जीतकर लाई हुई बेशकीमती संपदा थी। लोक पर शोध करनेवालों के अनुसार - एक हलवाई से हुए युद्ध में यह बेंच हलवाई के यहाँ से जबरन उठाकर लाई गई थी। यहाँ 'जबरन' की जगह 'जीतकर' पढ़ें। बकाये पैसे को लेकर किए गए पानवाले के इस व्यक्तिगत युद्ध में उसके सैनिकों के तौर पर स्कूल के तीनों अध्यापक मय हेड मास्टर थे। चार-पाँच लफंगे पनेड़ी टाइप लड़के भी थे। अचानक धावा बोलने के कारण वे लोग बेंच उठा पाए थे। इसलिए एक भय बेंच के साथ जुड़ा था कि कहीं हलवाई पलटवार करके बेंच उठवा न ले। इस बेंच का सबसे ज्यादा फायदा चूँकि मास्टरों को था, इसलिए उनकी जिम्मेदारी भी थी कि बेंच का पूरा खयाल रखें। स्कूल बंद करने से पहले हेड साहब बेंच को अपने सामने स्टोर में बंद करवाते थे।

'हे रे किसनवा, चल रे, बाँटे का टैम हो गया।'

अभी-अभी हेड साहब ने खुद बच्चों को हाँक लगाई थी कि लाइन बना कर आ जाओ। 'एम डी एम' यानी की मिड डे मील का टाइम हो गया है। बड़े पतीले में दलिया खदबदा रहा था और नमक के ढेर सारे रोड़े पेड़ के नीचे एक बुराने बोरे पर लेटे थे। बेंच पर बैठे एक मास्टर ब्रजनंदन अचानक उठकर आए, थोड़ा-सा झुके और मुट्ठी भर नमक के रोड़े बोरे पर से उठाकर झपाक से खदबदाते घोल में डाल दिए।

'पका नहीं है ठीक से।'

'क्या पकेगा? जाने कौन मेर गेहूँ दिया है इस बार! पकता ही नहीं। नया बोरा खोला गया है।'

'चीनी ही डालते?'

'यहाँ कितना पहुँचता है ब्रजनंदन। यही चीनी-वीनी। और क्या? अपने हिस्से क्या आता है बताओ तो? ऊपर के लोग छोड़ें तब न यहाँ आएगा। अपने टेंट से खिलाएँगे क्या हम? बताओ तो।'

हेड साहब अँगोछे से मुँह-नाक पोंछते हुए उठे। कुछ हताश।

'हाँ, जितना है उसमें से तीस दिन भी तो चलाना है।'

नएवाले जूनियर मास्टर ने भी हताशा में ही कहा।

'चलाना क्या है शिवचरन। अरे किसी दिन कम बनेगा किसी दिन ज्यादा। नहीं रहेगा तो नहीं बनेगा। इसमें हम क्या कर सकते हैं।'

ब्रजनंदन जी ने समझाया। इस पर जूनियर मास्टर निरुत्तर हो गए।

इधर बच्चों का कीड़ामार अभियान चल रहा था। टीन की छतवाले, लंबे से उस बरामदे में। छत पर से कीड़े टपकते रहते। न जाने कहाँ से कीड़े चलते हुए आते रहते। अनवरत। जिनमें ढोले भी होते, गोबरैले भी...। तो वहाँ बच्चे, पकड़-पकड़कर कीड़े कभी पैर से कुचल कर, कभी ईंटा से कुचलकर, कभी हाथ में पकड़े बर्तन से कुचल कर मार रहे थे। कीड़ा कुचलता तो उसके पेट से सफेद रंग का लिजलिजा द्रव्य बाहर आ जाता। इतनी तन्मयता और उमंग के साथ बच्चे इस खेल में मगन थे कि कितने तो भूल भी चुके थे कि उन्हें भूख लगी है। बावजूद इसके वे खुशी से हो-हो कर के चिल्लाए। अचानक उग आई उनकी आँखों की चमक ने बता दिया कि वे किसलिए यहाँ इकट्ठा हुए थे।

हेड साहब ने नजर के इशारे से ब्रजनंदन को कुछ समझाया। इशारे के बाद ब्रजनंदन उठे और चीनी का बोरा लेकर स्टोर की तरफ दौड़े।

'हटो, जरूरी सामान है।' ऐसा बच्चों से कहते हुए वे खुद ही बोरा स्टोर में रख आए। हेड साहब को सर्दी-जुकाम हुआ था। बार-बार कंधे पर टँगे अँगोछे से अपनी नाक-आँख पोंछ रहे थे। उसी अँगोछे से पतीला पकड़कर दलिया में कलछुल भी चला रहे थे। एक-दो जगह चूल्हे की आगे से अँगोछा काला पड़ गया तो चेते - 'अरे अखबार का टुकड़ा देखो तो।'

मास्टर ब्रजनंदन, पानवाले से अखबार का एक पन्ना लेकर हाजिर हुए। उसी पन्ने को मोड़कर मोटा किया गया और तब हेड साहब उसी मोटे पन्ने से पकड़कर पतीले में कलछुल चलाने लगे। हेडसाहब अक्सर इस काम में रुचि नहीं लेते हैं। मगर आज मूड में हैं। फगुआ जैसा कुछ गुनगुना रहे हैं। सबेरे से यही अभियान चल रहा है स्कूल में। ईंटा जोड़कर चूल्हा बनाया गया है।

'सुनते हैं कि गैस स्टोव का पैसा स्कूलों को मिला है?'

'हम भी सुनते हैं।'

कहकर हेड साहब आगे निकल जाते हैं। उनके सहायक हैं ब्रजनंदन। सो प्रायः उन्हीं की जिम्मेदारी में होता है यह आयोजन। ब्रजनंदन जी अपने से जूनियर शिवचरन जी को हलवाई के यहाँ दौड़ा देते हैं। तीन ठो चाय। हलवाई अपने नौकर से चाय भिजवाता है। एक एलुमिनियम की कालिख लगी केतली और तीन कप पकड़े छोटा-सा नौकर आता है। बाल श्रम के सारे कानूनों के बावजूद वह पूरी मुस्तैदी से अपना काम करता है। यह बँधी चाय है। बँधी चाय माने चाय के पैसे हिसाब कॉपी में लिखते जाना और महीना पूरा होने पर पेमेंट। बीच में कोई आ जाता है तो यही चाय चौंतीस नंबर में बदल जाती है। चौंतीस नंबर माने तीन बटा चारवाली चाय। यानी कि तीन कप चाय चार प्यालियों में। चौंतीस से पैंतीस नंबर तक चाय चल जाती है। लेकिन इस सब के बीच में एक व्यवधान है। हलवाई के जेहन में बसी बेंच की स्मृति। हलवाई को अपनी बेंच याद आ जाती है तो वह शिवचरण जी को दूध खत्म होने का बहाना करके टरका देता है।

तीनों मास्टर लोग चाय पीने लगे। थक गए हैं। जैसे चाय नहीं सदी भर लंबा अमृत पी रहे हैं। ऐसा ढीले-ढाले, टेढ़े-मेढ़े और लगभग नंग-धडंग बच्चों को लग रहा है। वे

प्रतीक्षा में रुके हैं। बेसब्र। मास्टर की एक आवाज पर भरभरा कर आगे की तरफ गिर जाएँगे।

शिवचरन फिर पानवाले से अखबार माँग लाए हैं और उसका छोटा-छोटा टुकड़ा बना रहे हैं। जैसे कि अखबार के एक पन्ने से दस टुकड़े या बारह।

ब्रजनंदन आदेश दे रहे हैं और शिवचरन उसी टुकड़े पर कलछुल से नाप कर दलिया डाल रहे हैं। एक कलछुल एक बच्चा। कुछ बच्चे घर से अपना बरतन लेकर आए थे। लेकिन कीड़ामार अभियान से बरतन इधर-उधर हो गया। वे लड़ रहे हैं और इतने उतावले हैं कि एक-दूसरे के ऊपर गिर-गिर पड़ रहे हैं। आदेश के बावजूद लाइन उनमें से किसी ने नहीं बनाई है। सब घेरे हैं पतीले को। मास्टर ब्रजनंदन को, शिवचरन को। हेड साहब खाट पर वहीं पेड़ के नीचे लेट गए हैं। आँखें मूँदे।

'गिर जाओ इसी हंडा में।'

ब्रजनंदन जी की आवाज गूँजती है। किसी का पैर और किसी का सिर उसी गरम पतीले से टकरा गया है। यह आवाज गूँजती है तो हेड साहब की मुँदी आँखें खुल जाती हैं। अचकचाकर वे उठते हैं। और आस-पास खड़े दो चार बच्चों को ले दनादन... 'साले मछली बाजार बना रखे हैं।' चिल्लाकर फिर उसी खाट पर निढाल।

'खत्म हुआ खेला।' ब्रजनंदन बड़बड़ाए।

'मास्साब, हमें नहीं मिला।'

इतने में एक छोटी, पतली, काली-सी लड़की, उम्र लगभग सात-आठ साल दौड़ती-हाँफती आई।

'कहाँ रह गई? सुबह क्यों नहीं आई? ईंटा-गारा ढोने के टाइम भाग जाओगी? खाने के टाइम हाजिर। काम की न काज की, नौ मन...'

'छोटके बाबू को उल्टी-दस्त लगा था कल से। इसीलिए...'

लड़की इतने में रुआँसी हो गई।

ब्रजनंदन द्रवित।

'महतारी कहाँ है?'

'फैक्टरी में।'

'काँछ के दे दो।' उन्होंने शिवचरन को सुझाया। शिवचरन उस समय खुद दलिया का पान कर रहा थे। जल्दी से खाकर उठे। अब हेड साहब तो खाते नहीं। ब्रजनंदन भी नहीं। दोनों अपना कच्चा हिस्सा ले जाते हैं। लेकिन हमारे शिवचरन के घर में कोई नहीं। नई नियुक्ति के फलस्वरूप आए हैं। जो घर ले जाएँगे तो बनाना पड़ेगा। गैस-वैस का खर्चा-झमेला अलग। इसलिए वे खा रहे हैं। आदेश के बाद जल्दी-जल्दी खाए। खाकर उठे और लगे पतीला काँछने। जैसे-तैसे एक कलछुल दलिया हो गई। शिवचरन ने वहीं पड़ा कागज का एक टुकड़ा उठाया और उसी में काँछी दलिया रखकर लड़की की तरफ बढ़ा दिया। फिर हाथ धोने सरकारी नल की तरफ चले गए।

'पानी नहीं है। तभी का जमाना अच्छा था जब चाँपाकल लगता था।' कहकर उन्होंने पानवाले से पानी माँगा।

ठीक इसी समय पानी हिल गया और उसके भीतर बना चित्र बिखर गया। ठीक इसी समय सूरज की किरणें इस पानी पर एक पल ठहरकर आगे बढ़ गईं। इस जल के भीतर हिलते हुए भी सुनीता नारायण पूरे जोश में बताने लगीं कि सन् 2010 के बाद भारत को पीने के पानी की समस्या से जूझना पड़ेगा। उसी के नीचे एक कार्टून भी बन गया। जिसमें एक तरफ बड़े-बड़े स्वीमिंग पूल थे। बड़े-बड़े पंचसितारा होटल जैसी इमारतें थीं। दूसरी तरफ धारीदार बुशर्ट पहने आदमी था, जो सरकारी नल खोलकर खड़ा था, जिससे बूँद-बूँद पानी टपक रहा था। नीचे लिखा था - 'बूँद-बूँद जीवन।' इसी समय सड़क पर से बह रहे पानी की तरफ ब्रजनंदन का ध्यान चला जाता है।

'ओह तो ये बात है!' मन ही मन उन्होंने कहा। पता होता कि कहीं आगे पाइप फट गया है तो नल की तरफ जाते ही क्यों।

इधर दलिया गपर-गपर खा लेने के बाद लड़की अखबार के टुकड़े पर बने चित्र को देखने लगी। चित्र में एक उड़ता हुआ खूबसूरत हेलीकॉप्टर था और इधर-उधर नीले रंग का सूट-टाई लगाए बेहद स्मार्ट लोग खड़े थे। नीचे लिखा था - 'ए सीन फ्राम द मैट्रिक्स? नॉट रियली, इट्स बुश'स सीक्यूरिटी डिटेल।'

लड़की ने कुछ देर तक हेलीकॉप्टर को देखने के बाद गीले से उस कागज को वहीं फेंक दिया। पान की गुमटी के आगे।

अगर यह अँग्रेजी की जगह हिंदी में लिखा होता तो भी लड़की नहीं जान पाती कि यह हेलीकॉप्टर और ये दुनिया की सबसे जबरदस्त सुरक्षा व्यवस्था किसके लिए, क्योंकर है? और यह भी नहीं कि बुश कौन हैं? उनके भारत आने पर क्या-क्या हुआ? बच्ची क्या मास्टर भी ठीक-ठीक नहीं बता पाएँगे कि क्या-क्या, क्यों-क्यों हो रहा है। जो टी.वी. चैनल बता देते हैं, घुमा-फिरा कर, रात-दिन एक करके, वही लोग तत्काल जान लेते हैं। फिर अपने रोज के जुगाड़ में भूल जाते हैं। अब वही मास्टर साहब, जो हिंदुस्तान के मिस इंडिया यूनिवर्स जैसे आयोजनों से लेकर अमेरिका, जार्ज बुश, नेताओं की अय्याशी, प्रधानमंत्री की गोवा जैसी यात्राओं पर एक-दिन में होनेवाले, न गिने जा सकनेवाले खर्च वगैरह को लेकर तात्कालिक रूप से दुखी हुए थे, स्कूल में एक चपरासी, मेहतर, कुर्सी या पंखे की कमी...

'पतिलवा के माँजी?'

जूनियर मास्टर शिवचरन की यह इतनी दयनीय चीख थी कि दुनिया भर की सारी बातें बीच में ही छूट गईं।

उधर तमाम टी.वी. चैनलों पर एक चित्र दिखाया जा रहा था, जिसमें लाइन से स्कूल यूनिफार्म पहने बच्चे खड़े थे। बच्चों के सामने एक बड़ी-सी मेज दिख रही थी, जिस पर एक तरफ खूब सारी प्लेटें रखी थीं और प्लेट के बगल में कुछ पतीले, कढ़ाई और पानी का बड़ा-सा कंटेनर रखा था। इनके पीछे बड़े स्मार्ट मॉडल टाइप तीन-चार लोग खड़े थे। इन तीन-चार लोगों को आप अध्यापक और अध्यापिकाएँ मान लें, ऐसा बताया गया था। पतीलों पर लेबल चिपका था, जिस पर 'मिड डे मील' लिखा था। इस लेबल को विशेष रूप से फोकस किया गया था। इस चित्र के सामने से बिना यूनीफार्मवाले असली बच्चे प्राइमरी पाठशाला से निकलकर, दलिया खाकर, कुछ अपने-अपने बरतनों में लेकर घर-जैसे अपने ठिकानों की ओर भागे थे। सात-आठ बरस की वह लड़की भी। लड़की पीछे जाने की बजाय आगे बढ़ गई थी। कब बढ़ गई, उसे पता नहीं चला। चलते-चलते वह उसी बेंचवाले हलवाई की दुकान के सामने तक आई। उसने भरसक कोशिश की सड़क के किनारे बने रहने की। लेकिन अंततः वह सड़क के बीच में ही चकरा कर गिरने लगी। इसी के साथ ढेर सारे सफेद भूरे रंग में मिला हुआ हल्के हरे रंग का कुछ तरल उसके गले से भरभरा कर निकला। लड़की वहीं गिर गई। हलवाई अपनी ऐतिहासिक बेंच और बँधी चाय के कारण अपने को स्कूल से अलग नहीं मान पाता था। उसे स्कूल के बच्चों के आने, भागने, घर जाने, मास्टरों के बाजार जाने, पान खाने से लेकर स्कूल में ताला लगाने जैसी तमाम बातें साफ पता

होती थीं। उसने लड़की को फौरन स्कूल से जोड़कर देखा और बरतन माँज रहे अपने छोटे से नौकर को ललकारा।

'जाओ! उठाओ! नहीं तो कुचल जाएगी। लड़की जात है।'

ऐसा ही कुछ कहकर वह कढ़ाहे के उबलते दूध में करछी चलाता रहा। इसके बाद हल्ला मच गया। बरतन माँज रहा नौकर कालिखवाले उसी हाथ से लड़की को घसीटने लगा। हलवाई अब चलकर आया और इत्मीनान से घसीटने के खत्म हुए काम में मदद करने को तत्पर दिखने लगा। कुछ लोग जुट आए। मास्टर लोग भी जुटते, पर वे जा चुके थे। सड़क पतली थी। तिस पर जीप और मोटर साइकिल आदमी से ज्यादा। इसलिए एक-दो मिनट को जाम भी लग गया। फिर सब सामान्य हो गया। यातायात भी। लोग भी।

इसी के बाद वह दृश्य उत्पन्न हुआ, जिसमें दौड़कर आता लड़की का पिता है। थोड़ा हड़बड़ाया-सा। जिसने चिलचिलाती धूप में लाल धारीदार बटन रहित सौ प्रतिशत सिंथेटिक नई टी शर्ट और गाढ़े भूरे रंग की सौ प्रतिशत सिंथेटिक पैंट पहनी है। पैंट के पीछे के दोनों पुट्ठों पर दो पॉकेट हैं और सामने घुटने के कुछ ऊपर भी दो पॉकेट हैं। लेकिन पैंट पायचे से पूरी घिस चुकी है। बाल बहुत समय से न कटवाने के कारण अजीब तरह से लंबे हो गए हैं। दाढ़ी नहीं है। पैरों में चप्पल है और बाएँ हाथ की कलाई में एक घड़ी भी। हाथ में कुछ मिट्टी, बालू या सीमेंट जैसा लगा है, जिसे वह लगातार अपनी पैंट के सहारे झाड़ रहा है।

इसी के ठीक पीछे दौड़कर आती उस स्त्री की कल्पना हम करते हैं, जो तमाम ललित कलाओं का आकर्षक विषय रही हैं। लेकिन अफसोस कि वह स्त्री नहीं आ पा रही है। आती कैसे? काम पर गई है और उस तक सूचना पहुँचा पाना संभव भी नहीं हुआ। तो पिता रूपी वह व्यक्ति अकेला आ रहा है।

लड़की बेहोश थी। लड़की धीरे से गिरी थी या तेजी से? किसी ईंट, कंकड़ से सिर टकराया था या नहीं? लड़की ने जो उल्टी की थी, वह सफेद थी या हरी या हरी मिश्रित सफेद थी या सफेद मिश्रित हरी? लड़की के मुँह पर उल्टी के कारण जो द्रव चिपका रह गया था, वह जहर-खाने से निकला झाग भी हो सकता था? कोई इसे ठीक-ठीक नहीं कह सकता था। सबने उसे गिरने के क्षण के बाद देखा था। किसी को तेज 'धड़ाम' जैसी आवाज सुनाई पड़ी थी। कोई कहता था कि गाड़ियों के लगातार बजते हार्न से कुछ सुनाई ही नहीं पड़ा। खैर, तो पितानुमा वह व्यक्ति, जिसका नाम कभी अवधेश रंजन

था और जमाने ने जिसे अवधा, अवधी, अवधू तक बना दिया था, ढीली चाल में तेज दौड़ रहा था।

वह लड़की तक पहुँचकर रुका। तब लड़की हलवाई की दुकान की बेंच पर लेटी हुई थी। उसकी फ्रॉक उठी हुई थी और छोटी-सी पुरानी स्कूली नेवी ब्लू रंग की हॉफ पैंट दिख रही थी। अवधा ने हाँफते हुए सबसे पहले लड़की की फ्रॉक ठीक की।

'हम देख के जल्दी से दौड़े, नहीं तो कुचल जाती आज।'

हलवाई ने गर्वपूर्वक अवधा को सुनाकर कहा। अवधा ने बेहद दयनीय कृतज्ञता से उसे देखा।

'जरा ध्यान रखा करो। लड़की जात है।'

हलवाई ने फिर कहा। इस पर अवधा ने फिर बेहद कृतज्ञता से उसे देखा। बरतन माँजने वाला लड़का उसकी सहायता के लिए लपका, लेकिन अवधा ने उसे हाथ से रोककर लड़की को कंधे पर उठा लिया और अस्पताल की तरफ जानेवाली दिशा में एक हाथ उठाकर ऑटो रिक्शा की खोज में बढ़ गया।

ऑटो सरकारी अस्पताल के सामने रुका तो अवधा ने अपनी पैंट के अंदर के पॉकेट में पड़े रुपयों को गिना और पूरे चालीस रुपये ऑटोवाले को पकड़ा दिए।

'पचास होता है। मरीज लेकर आए हो, नहीं तो...'

अवधा ने विवशता से उसे देखा। फिर सहसा जोर से बोला - 'ज्यादे न करो। टाइम नहीं है, नहीं तो बीस से ज्यादा न देता।'

उसे उसी क्षण अपने आत्मविश्वास पर हैरत हुई।

'हुँह' करके ऑटोवाले ने ऐसा मुँह बनाया, जिसमें पैसा न होने पर भी अकड़ दिखाने वालों के लिए हिकारत, दया, हैरत या 'जा तुझे छोड़ दिया' जैसे कुछ भाव थे। लेकिन ऑटोवाले ने कुछ कहा नहीं और आगे बढ़ गया।

ऑटो से निपसटने के बाद अवधा ने जैसे ही पहला पैर बढ़ाया, वहाँ बारिश से बना छोटा हल्का दलदल था, जिसमें वह फिसलते-फिसलते बचा। उसने और जोर से बच्ची को पकड़ लिया और कीचड़ पानी से बचने के लिए फर्लांग-फर्लांग भर की दूरी पर रखी गई ईंटों पर पाँव रखते हुए इमरजेंसी वार्ड की तरफ बढ़ा। यह वैसा ही पानी था जैसा

स्कूल के मैदान में हुआ करता था। ऊपर से मौसम बरसात का था। दो दिन पहले जो पानी बरसा था, पर्याप्त निकास न होने से वह भी यहीं रह गया था। उमस और तेज गर्मी के बीच सड़ा पानी तमाम कीड़ों और मच्छरों की एक परत अपने ऊपर जमाए हुए था।

इमरजेंसी वार्ड में पहुँचकर अवधा ने नियमानुसार लड़की का नाम, अपना नाम, पता लिखवाया और पीछे मुड़कर इमरजेंसी वार्ड के बरामदे में रखी बड़ी सी कुर्सीनुमा बेंच पर बैठ गया। बैठते ही उसने जाना कि बेंच एक पाँव से लाचार है और किनारे का सहारा लेकर जैसे-तैसे टिकाई गई है। अवधा घबराकर उठ गया। लेकिन लड़की को टाँगे रखना कठिन था। उसके कंधे दर्द से सुन्न हो रहे थे। उसने उसी टूटी लंबी कुर्सीनुमा बेंच पर लड़की को लिटा दिया और कुर्सीनुमा बेंच का हत्था पकड़े दीवार के सहारे खड़ा हो गया।

'चलो, चलो, जनरल वार्ड में। बहुत केस आ रहे हैं आज ऐसे।'

बड़ी बेरहम कड़कती आवाज में नर्स ने कहा। वह बहुत मोटी थी। इतनी कि उसके तेज चलने के बारे में सोचा नहीं जा सकता। अवधा ने मोटी नर्स के कहे पर ध्यान नहीं दिया।

'लेकिन डॉक्टर पहले देख लेते।'

अवधा के इस कहे पर भी किसी ने ध्यान नहीं दिया। इस पर वह आगे बढ़कर डॉक्टरवाले चैंबर में झाँकने लगा। डॉक्टर के चैंबर में दो लोग बैठे थे। एक गुड़िया जैसी लंबे बाल खोले स्त्री और दूसरा खूबसूरत लंबा पुरुष। बीच में पड़ी टेबल पर पकौड़ी और चाय रखी थी। वे लोग अँग्रेजी में बात कर रहे थे। इसलिए अवधा नहीं बता सकता कि वे लोग किस जरूरी विषय पर लगे थे।

'ए क्या करते हो? डॉक्टर बिजी है। जनरल वार्ड में एक साथ देखेगा। सुनता नहीं! जा यहाँ से। फोकट में भीड़ लगाया है।'

मोटी नर्स ने क्रोध में आदेश दिया और घूरती हुई वहीं खड़ी हो गई। अवधा ने बच्ची को उठाया और तेज कदमों से जनरल वार्ड की तरफ भागा।

'हटो, हटो, बच्ची की हालत बहुत खराब है।'

उसने जनरल वार्ड में पहुँचकर अगल-बगल बिखरे लोगों से कहा। मगर यह कहते ही उसने पाया कि लगभग तमाम-तमाम बच्चों की हालत कुछ वैसी ही दिख रही है। लोग ठूँस पड़े हैं। एक बच्चा लगातार उल्टियाँ किए जा रहा है, जिसे साफ करते जाने का कोई जरिया न होने से उस पर कागज और कभी अस्पताल के भीतर बने ग्राउंड से खोदकर लाई गई मिट्टी रख दी जा रही है। कोई तंबाकू ठोंक रहा है। कोई बीड़ी सुलगा रहा है। कोई थूकने के लिए बाहर आ-जा रहा है। कोई तैश में है। उसे अपने बच्चे की जान प्यारी है। वह डॉक्टर खोज रहा है। इस चक्कर में जिस-तिस से लड़ पड़ रहा है। एक दूसरा गालियाँ दे रहा है। प्रशासन, व्यवस्था, सरकार, डॉक्टर, नर्स, अस्पताल... सबको। पर न तो सही व्यक्ति तक उसका गुस्सा पहुँच रहा है, न गाली। औरतें अजीब रोती जैसी आवाज में बोल रही हैं। अचानक एक औरत जोर से रोने लगी। एक बच्चा अभी-अभी मर गया है...।

कुछ लोग उसकी तरफ लपके। पूरा जनरल वार्ड उल्टी, दस्त, पसीना तंबाकू... जैसी दुर्गन्धों से भरा है। बॉथरूम का दरवाजा अकड़ गया है। ठीक से बंद नहीं होता। बॉथरूम की बदबू और बारिश के पानी में भीगे केचुए चलते हुए अंदर आ रहे हैं। उनके पीछे एक निशान बनता जा रहा है। पदचिह्न। एक आदमी अभी-अभी उल्टी पर पड़े कागज पर पैर रखता हुआ अंदर आया है...। अवधा को अपनी कही बात का अफसोस हुआ। कोई बेड खाली नहीं है। लोग नीचे बैठे हैं, बच्चे नीचे लेटे हैं। अवधा ने झट से एक जरा-सी खाली जगह में बच्ची को लिटा दिया। काम पर से दौड़कर आने से चद्दर लेकर आने का खयाल भी कहाँ रहा। घर पर भी किसे दौड़ाए और काहे दौड़ाए। कौन बैठा है? लंगड़ (पोलियोग्रस्त छोटा लड़का) इधर-उधर पड़ा होगा। रानी (पत्नी) को क्या कहे? फैक्ट्री का काम ही ऐसा है। कभी-कभी नौ से बारह और बारह से सोलह घंटे भी लग जाते हैं। एक बार जो कामगार फैक्ट्री में 'इन' हुआ तो अपना घंटा खत्म होने पर ही बाहर निकलेगा। बच्चा बीमार हो तो आने के लिए न कोई नियम बना है और न सूचना पहुँचाने का कोई माध्यम है। फैक्ट्री गेट पर कह-कहकर रह जाओ। कहते हैं बता देंगे। लेकिन बताते कहाँ हैं। फैक्ट्री का काम नहीं रुक जाएगा। सात मिनट की छूट मिलती है चाय पीने के लिए। साढ़े चार घंटे बाद का ब्रेक।

फिर बीस मिनट की छुट्टी मिलती है खाने के लिए। उसमें भी लाइन बनाकर खाने के काउंटर तक जाना होता है जहाँ प्रति थाली बीस रुपये की होती है। चार रोटी, नाप कर मिली दाल (पानी जैसी), सब्जी (कहने भर को सब्जी) मूली के कुछ टुकड़े और दही। जल्दी-जल्दी खाया और वापस काम पर। रानी का तो काम भी छोटा है। दवा की बोतलों पर लेबल चिपकाने का काम। तब भी इतनी आफत। कंपनी बाहर विदेश की है,

सुनते हैं। उसको क्या मिलता है। कैजुअल लेबर वाला सौ रुपया रोज। उसमें भी बीस रुपया थाली का। बचा लो या खा लो। चाय तो बिचारी ने कब से पीना छोड़ दिया है। अचानक ही अवधा के मन में रानी के लिए अगाध ममता उमड़ पड़ी। देखती तो हम यहाँ अकेले परेशान हैं। आती तो डॉक्टर, नर्स सबका पता लगा आती। लड़ लेती सबसे। जब से फैक्ट्री में लगी है, लड़ना खत्म ही हो गया है। खत्म क्या, किससे लड़े? आस-पड़ोस तक से मिलने का टाइम नहीं रह गया है। सोचते-सोचते अवधा ने अपनी लाल धारीदार टी-शर्ट निकाली और उसे मोड़कर लड़की के सिर के नीचे रख दिया। तभी बड़ी जोर का हल्ला मचा कि डॉक्टर आ गए हैं। डॉक्टर से पहले उसी मोटी नर्स ने प्रवेश किया। नाक पर हाथ रखकर मुँह सिकोड़ा उसने।

'ओह, माई गॉड! कितना गंदा कर डाला है तुम लोगों ने! साफ करो। यहाँ से उल्टी हटाओ। किसका बच्चा पड़ा है इधर? जगह बनाओ। डॉक्टर साहब आ रहे हैं। गुस्सा होंगे।'

इस पर उल्टीवाले बच्चे की माँ दौड़ी और नंगे हाथों से अखबार मोड़कर उल्टी काँछने लगी। नर्स ने मुँह घुमा लिया।

'ओह, माई गॉड! मुझे ही उल्टी हो जाएगी यहाँ।'

नर्स ने उल्टी करने जैसा मुँह बनाया। लेकिन तत्काल ही उसने अपने भाव रोक लिए, क्योंकि देवदूत अंदर आ गए थे। देवदूत यानी डॉक्टर। देवदूत ने एक दो बच्चों का हाथ उठाकर नब्ज देखने जैसा कुछ देखा और धीरे-धीरे नर्स के कान में कुछ कहने लगे। इसके बाद लोग अपने बच्चों के बारे में जानने-पूछने के लिए उन पर झपटे। लेकिन नर्स ने उसी समय चिल्लाकर रास्ता बनवाया और देवदूत तेजी से बाहर निकल गए। वे जितनी तेजी से बाहर निकले थे, लोग भी उतनी तेजी से बाहर दौड़े। उनके जाने के बाद नर्स दवाओं के नाम पर्ची पर लिखकर देने लगी। सबके बार-बार पूछने पर कि डॉक्टर ने क्या बताया? उसने चिल्लाकर कहा - 'जहरीला खाना खाया है। जल्दी दवा लाओ, नहीं तो तुम जानो।'

'साहब इसे तो अभी तक...'

'देरी करोगे तो भुगतोगे। जल्दी जाओ।'

किसी की भी बात का नर्स के पास यही उत्तर था। अवधा ने भी दवा की एक पर्ची ली और लड़की के पास ही एक बच्चे को सहलाती बैठी बूढ़ी महिला से कहा - 'जरा ध्यान

रखना अम्मा।' और फुर्ती से दवा लाने बाहर मेडिकल स्टोर की ओर भागा। दवा लेकर जब वह लौटा तो देखा कि नर्स धड़ाधड़ बच्चों को इंजेक्शन लगा रही है। बल्कि अब उस मोटी नर्स के साथ तीन-चार और नर्सें भी हैं। उसने भी अपनी दवाएँ एक नर्स की तरफ बढ़ाई। लपककर उस नर्स ने उसकी लाई दवाओं में से एक इंजेक्शन निकाला और धड़ से अपनी गतिमयता को बनाए रखते हुए लड़की को पलटकर उसके पुट्ठे पर खोंस दिया। नर्स के इंजेक्शन लगाने का यह तरीका इतना विद्रूप था कि वह क्षण भर को दहशत में खड़ा ही रह गया। इसी एक क्षण में नर्स जाने कहाँ विलुप्त हो गई। नर्स के बदले सामने दरवाजे पर हिलती हुई एक छाया उसे दिखी। जिसकी कमर पर, पैर इधर-उधर करके लिया गया एक पोलियोग्रस्त बच्चा था। अंदर घुसते ही वह छाया लड़की पर झपटी। उसे हिला-डुला सहलाकर देखा और मुड़कर पूरे वार्ड का मानो निरीक्षण-सा करने लगी।

'रानी!'

अवधा का मन हुआ दौड़कर रानी नाम की उस स्त्री के गले लग जाए और रो पड़े। लेकिन वह 'रानी' पुकारकर खड़ा रह गया।

'अब तक क्या-क्या हुआ?'

स्त्री ने उससे इस तरह पूछा मानो उसे पहले से यहाँ का सब हाल पता हो।

'बैठ जा।' वह स्त्री से कहना चाहता था। दवा दे दिया है। इंजेक्शन लग गया है। होश आ चुका है। कैसे कब-कब क्या हुआ? यह भी बताना चाहता था। लेकिन स्त्री ने उसकी तरफ नहीं देखा। अलबत्ता हाथ में लिया एक झोला उसकी तरफ बढ़ाया। बच्चे को जमीन पर उतारकर वह आगे बढ़ गई। झोला हल्का-सा अभी तक गर्म था। ओह, तो स्त्री को रोटी बनाने का भी ध्यान रहा। उसे अब अपनी भूख, उल्टी और नींद की याद आई।

'इन लोगों को कैसे ग्लूकोज चढ़ रहा है? हमारी लड़की को भी चढ़ाइए।'

स्त्री की इस आवाज से अवधा एक बार फिर चौंक गया। उसने अब तक कैसे नहीं देखा कि इस भीड़-भाड़ में कुछ बच्चों को ग्लूकोज चढ़ रहा है और इसने आते ही...।

'हद कर दिया है आप लोगों ने। सरकारी अस्पताल में भी... आधे का इलाज करिएगा, आधे का नहीं? कुछ रहता है सरकारी अस्पताल में? कहाँ जाएँ गरीब गुरबा? बताइए? ऐसा हाहाकार मचा है दुनिया में। हमारी भी लड़की को लगाइए ग्लूकोज की बोतल...

ये कहाँ का न्याय है... आप कहिए डॉक्टर साहब से। चलिए, हमको ले चलिए। हमको जगहिए बता भर दीजिए। हम बात कर आते हैं...'

नर्स ने रानी की बात पर गौर किए बिना उसे अपने पीछे बाहर आने का इशारा किया।

'डॉक्टर के पास बहुत भीड़ है। अभी जाने से कुछ नहीं होगा। देखेगा भी नहीं। सुबह जाना। पैसा लाओ। हम ग्लूकोज मँगा देते हैं। बाहर से मँगवाना पड़ेगा। ज्यादा पैसा लगेगा। सोच लो। डॉक्टर के पास जाओगी तो वह भी यही कहेगा। फीस भी लेगा और पर्ची पकड़ा देगा। अभी मेरी बात समझ में नहीं आ रही है। जाओ, सोच लो।'

नर्स ने बाहर आकर कड़कती आवाज छोड़कर धीरे से कहा।

'बताइए तो कितना लगेगा? हमारी गरीबी का कुछ ध्यान रखिएगा।'

तेज आवाज की जगह अब रानी की आवाज भी कमजोर पड़ गई। अवधा इस बीच उनके पीछे-पीछे बाहर निकल आया।

'तुम चलो। हम बात करते हैं।'

अवधा ने पास पहुँचते ही नर्स को जताया कि वह है और मुख्य वही है। नर्स मुड़कर अवधा को कुछ समझाने लगी। तब वहीं पीछे खड़ी रानी से अवधा ने पूछा - 'पैसा होगा क्या?'

'हाँ। बारीवाले (सूदखोर) से लाई हूँ।'

थोड़ी ही देर में ग्लूकोज की बोतल पकड़े नर्स अवतरित हुई। नर्स बोतल बगल के बेड की लोहे की रॉड पर लटका देती है, जहाँ पहले से ही एक बोतल लटकी थी और लड़की के दाहिने हाथ की कलाई की नस पर खुभो कर उसका पतला-सा पारदर्शी पाइप लगा देती है। उस खुभोए गए स्थान को टेप से ढँक कर आदेश देती हुई जाती है।

'देखते रहना। पानी खत्म होने पर यहाँ से हटा देना।'

ग्लूकोज की बूँद-बूँद गिर रही है। धीरे-धीरे नसों में जा रही है। जमीन पर रखी लाल धारीदार टी-शर्ट पर सिर रखे लड़की बीच-बीच में कुनमुनाकर आँखें खोल रही है। फिर बंद कर रही है।

निर्जीव-सी अपने माँ-बाप को देख लेती है। छोटा भाई उसी की बगल में गिरा हुआ-सा सो रहा है। रानी वहीं दीवार से लगकर बैठ गई। अवधा भी बैठ गया। कुछ देर तक पति-पत्नी दोनों ग्लूकोज की बोतल देखते रहे। फिर अवधा उठा और वार्ड से निकलकर कॉरीडोर में चला गया। दस अभी नहीं बजे हैं। नर्स ने कहा था डॉक्टर दस बजे तक बैठते हैं। अपने घर पर ही देखते हैं। जाकर एक चक्कर देख आते हैं। बगल में एक आदमी छोटा-सा रेडिया बजाता घूम रहा है। रेडियो पर बजता हुआ कुछ हवा में बिखर रहा था। अवधा को लगा जैसे रेडियो पर राष्ट्रपति देश के नाम संदेश दे रहे हैं। प्रधानमंत्री बार-बार घोषणा कर रहे हैं 1984 के दंगों में मारे गए सिखों को पूरा न्याय मिलेगा... मुआवजा... गुजरात के दंगों का शिकार हुए लोगों को मुआवजा... मेले में, तीर्थों में, नेताओं की मंगल यात्राओं में, स्टेशनों पर, भगदड़ में, जन्मदिन की बँटती साड़ियों में... मारे गए स्त्री, पुरुष, बच्चों को मुआवजा... रेल मंत्री की आवाज आ रही है... रेल-दुर्घटनाओं में मारे गए यात्रियों को... पूरा देश मारे गए लोगों और मुआवजे का पर्याय बन गया है...। उसे लगा मुख्यमंत्री रेडियो में से निकल आए हैं। एकदम अजीब मुँह बनाकर कह रहे हैं - हमें दुख है... मिड डे मील से बीमार हुए बच्चों को मुआवजा...

हैरानी से उसने अपने बगल में बैठे व्यक्ति से पूछा - 'क्या मुख्यमंत्री बीमार बच्चों को मुआवजा दे रहे हैं?'

'नहीं तो।' बगल के व्यक्ति ने तटस्थता से कहा। वह अवधा के साथ कॉरीडोर में पड़ी लंबी कुर्सी पर पालथी मारकर बैठा था। अवधा कुछ अटपटा गया। उसी के कान बज रहे हैं!

'धत् तेरे की।' उसने बेवजह अपना पैर पटका और झेंप मिटाने की गरज से बोला - 'अरे साहब! मिड डे मील से 40-50 बच्चे बीमार पड़ गए हैं। अस्पताल में देखिए बेडें (बेड) नहीं है। हम तो जमीन पर लेटा आए हैं।'

'अच्छा। अखबार तो देखे नहीं भइया। तभी कह रहे हैं कि इतने बच्चे आज कहाँ से चले आ रहे हैं।'

उसने अपनी कमीज की जेब से तंबाकू का छोटा-सा पाउच निकाला। थोड़ा-सा तंबाकू हाथ में लेकर पाउच फिर जेब में रख लिया।

'लेना है?'

'नहीं।'

निश्चिंत होकर उसने तंबाकू मुँह में भर लिया।

'चलें भइया।' कहकर उठते हुए उस आदमी ने वहीं कोने में रखे, बड़े से डंडे में लगे छितराए से झाड़ू को उठा लिया।

'सरकारी है भाई। सँभाल के रख दें नहीं तो कोई यही मार ले जाएगा।'

वह हल्का-सा हँसा। अवधा ने भी हल्का-सा हँसने की कोशिश की। स्वीपर झाड़ू लिए चला गया। तब अवधा ने देखा कि जहाँ वह बैठा है, उसी के फर्श पर कितना तो गंदा पड़ा है। बहुतेरे अलग-अलग रंगोंवाले तंबाकू के पैकेट गिरे हैं। पीकदान लगा है, पर लोग उसके बाहर पान, तंबाकू और जाने क्या-क्या थूके हुए हैं। पान के कत्थई रंग के तरह-तरह के चित्र बन गए हैं...। तमाम रुई के फाहे, इंजेक्शन के पैकेट इधर-उधर फिंके पड़े हैं। यहाँ तक कि चिप्स और बिस्किट के खाली पैकेट भी... स्वीपर के झाड़ू लिए चले जानेवाले चित्र पर अब अवधा को गुस्सा आ रहा है। वह बेवजह ही पैर से दो-चार पैकेट को किनारे करने की कोशिश करने लगा। इस कोशिश में उसने धीरे-धीरे सारे मोटे सामान को कोने की तरफ अपनी हवाई चप्पल के सहयोग से खिसका दिया। तभी इस चित्र के बगल में एक दूसरा चित्र लग जाता है। एक झुंड उधर से गुजरता है, जिसमें से नाटे कद का एक आदमी उसी की तरफ थोड़ा झुकता है और अचानक उसी की तरफवाले कोने का निशाना साधकर तंबाकू थूकता है। अवधा को लगता है कि जैसे थूक के कुछ छींटे उस तक आ गए हैं। उसके कपड़ों पर पड़ गए हैं। लेकिन नाटा आदमी निर्लिप्त है। आगे बढ़ चुका है। झुंड भी। उसी समय एक तंबाकू का पैकेट भी उसे गिरा मिला और संतरे की फाँक के आकारवाले हल्के नारंगी रंग का लेमनचूस भी। झुंड में से यह सब किसने गिरा दिया? वह थूक से इतना विक्षुब्ध था कि देख ही नहीं सका।

'दिन भर कौन झाड़ता रहेगा?'

वह झुंड से पूछना चाहता था। उसके मन में कुछ देर पहले झाड़ू लेकर जाते स्वीपर के चित्र से जो गुस्सा उठा था, वह स्वीपर से हटकर झुंड पर चला गया। इतने में झुंड में से गोद में एक बच्चा उठाए एक औरत तेजी से लौटी। इससे पहले कि वह कुछ बोले, पूछे, औरत ने झपाट से गिरा हुआ लेमनचूस उठाया और उसे धोने के लिए नल खोजने लगी।

नल दूर नहीं है। नल दिख रहा है। उसके ऊपर लिखा है - 'जल जीवन है।'

'टोटी में पानी नहीं है।'

औरत ने जैसे ही नल खोलने के लिए हाथ बढ़ाया, अनजाने अवधा के मुँह से निकल पड़ा।

'थोड़ा आगे जाइए। आगेवाले ब्लाक में। वहाँ नल है। टूटा है लेकिन। पानी गिरते जा रहा है। वहीं से...'

स्त्री थोड़ा-सा मुस्कराने को हुई और लेमनचूस को अपनी साड़ी से पोंछ कर, बच्चे के मुँह में डालकर आगे की ओर चली गई।

अवधा अस्पताल के जनरल वार्ड में वापस आ जाता है, जहाँ ग्लूकोज की बोतल को देखती, जमीन पर दीवार के सहारे टेक किए बैठी एक स्त्री ऊँघ रही थी। अवधा ने उसी की बगल में जरा-सी बची दीवार के सहारे थोड़ा-सा पैर फैलाकर अपने लिए लेटने जैसी जगह कर ली। जल्दी ही उसे झपकी लग गई।

कोई उसके पाँव से टकराकर गिरते-गिरते बढ़ा तो वह हड़बड़ाकर उठ गया। ग्लूकोज की बोतल की तरफ देखा। थोड़ा-सा ही बचा रह गया है। लड़की सो गई है। रानी को देखा। वह वैसे ही ऊँघ रही है। बीच-बीच में आँख खोलकर बोतल को देख लेती है।

'वाह री मेरी लड़ाका रानी!' वह मन ही मन मुस्कराया। आते ही तो पानी का नल ढूँढ़ने भागी। दूसरे ब्लाक में पानी मिला। वह भी कैसा पानी। अनवरत गिरता हुआ। उसी बहते पानी को बोतल में भरकर लाई। फिर सबको बताया। लोग भी उसी नल पर दौड़ गए। लड़की के मुँह में तुरंत कुछ बूँद पानी डाल दिया। मुझसे तो हो ही नहीं रहा था। ये ग्लूकोज तो अब चढ़ना शुरू हुआ है। कैसे झट से टाइम पूछकर लड़की को दवा पिला दी। नौ घंटे की ड्यूटी करके आई है लेकिन रोटी बनाना नहीं भूली। बारीवाले से पैसे ले आई। पता था वक्त-जरूरत पर पैसा सबसे आगे हो जाता है। पगली। सब याद रहा इसे। मैं तो ऐसे ही चल पड़ा था। जो कुछ जेब में पड़ा था। ठेकेदार से माँगने का होश तक न रहा। ...सोचते-सोचते उसे रानी पर प्यार उमड़ आया। कितनी सोहनी लगती थी शादी के समय। कैसी हो गई है। बोल नहीं फूटते थे। शर्माती रहती थी और अब यहाँ-वहाँ कैसे लड़ लेती है। लोगों की बोलती बंद कर दे अब तो। कितना तो झेल चुकी है।

एक बच्चा किन हालातों में, हौज में गिर कर मर गया। कौन समझेगा? दूसरा पेट में ही मर गया था। किसे बताएँ? तभी तो साँवला चेहरा फीका पड़ गया है। बाल देखो तो कैसे बिखरे पड़े हैं। काली माई का अवतार... मन ही मन हँसा वह। कितना निर्भर हो गया है वह इस स्त्री पर! शरीर थका था, पर जाने यह कौन-सी ऊर्जा थी कि उठा वह और रानी के करीब सट आया और उसका एक हाथ उठाकर अपने हाथ में ले लिया। एक क्षण को वह भूल ही गया कि वह जनरल वार्ड में है। यहाँ लोग आ-जा रहे हैं। सोए-जगे हैं। वार्ड के बल्ब की मद्धम रोशनी में एकटक देखते हुए, बिखरे हुए बालों वाली, बेढब-सी बैठी, ऊँघती-सी उस दुबली-पतली साँवली देहवाली स्त्री के हाथ को धीरे से चूम लिया। स्त्री ने हड़बड़ाकर पूरी आँखें खोल दीं। 'हटो' जैसा कुछ कहकर मुस्करा पड़ी। अवधा ने उसके गले में हाथ डालकर उसका सिर अपने कंधे पर रख लिया और बैठे-बैठे दीवार से टिककर बार-बार बोतल को देखते हुए सोने लगा।

इस चित्र के बाद एक दूसरा चित्र आता है, जिसमें सुबह आठ बजे एक स्त्री अपनी गोद में एक पोलियोग्रस्त बच्चा लिए भीड़ के बीच में खड़ी है। यह भीड़ डॉक्टर के घर के आगे है। स्त्री की गोद में पड़ा बच्चा भूख से रो रहा है। बगल में एक सात-आठ साल की लड़की अकड़ी हुई-सी जमीन पर बैठी है। स्त्री भीड़ से एक तरफ निकलकर लड़की के ही पास जमीन पर बैठ गई। लड़की का सिर उसने अपनी गोद में चिपका लिया और छोटे-लड़के को जमीन पर उतार दिया। लड़का एक पैर मोड़कर और दूसरा फैलाकर घिसट-घिसट कर चलने लगा। रोता जाता, चलता जाता। तब इस दृश्य को देख रहा पुरुष भीड़वाली लाइन से बाहर निकल आता है और भूख से बिलबिलाते बच्चे के लिए पाव लेने अस्पताल के बाहर सजी दुकानों की तरफ मुड़ जाता है।

एक बड़ा-सा बोर्ड लगा है। एक विशाल इमारत के आगे। इस पर तमाम चीजें लिखी हैं और उनके सामने तीर का निशान लगा है। इसी पर 'सिटी स्कैन सेंटर' भी लिखा है और इसके साथ बना तीर बाईं तरफ इशारा कर रहा है। उस दिशा में एक भवन है। हिंदी और अँग्रेजी में उसका नाम चमक रहा है। फिर भी हड़बड़ाया-सा एक आदमी उसी बोर्ड के आगे खड़े होकर किसी से पूछ रहा है - 'ऐ भइया, ये सिटी स्कैन सेंटर किधर पड़ेगा?'

'उधर।' यानी बाईं तरफ।

इस उत्तर के बाद एक स्त्री, पुरुष और उनके दो बच्चों को शीशे का वह खूबसूरत बड़ा-सा दरवाजा दिखाई पड़ता है, जिस पर 'पुश' लिखा है। इसे ठेलते हुए पुरुष को बेहद संकोच होता है। इस दरवाजे के पीछे ढेर सारी रंग-बिरंगी कुर्सियाँ पड़ी हैं, जिसमें

प्रतीक्षा करते लोग बेचैन ऊँघ में हैं। उसी में से एक कुर्सी पर एक पुरुष चार पॉच साल के पोलियोग्रस्त बच्चे को लिए बैठ गया है। इस पुरूष ने लाल धारीदार टी-शर्ट पहनी है, जो सौ प्रतिशत सिंथेटिक है। उसी की बगल में एक मरियल-सी धँसी आँखोंवाली स्त्री लाल ब्लाउज और गाढ़े फूलोंवाली सौ प्रतिशत सिंथेटिक साड़ी पहने बैठी है और उसकी बगल में सात-आठ साल की पतली-सी लड़की पैर ऊपर करके लेटी हुई-सी बैठी है। इस लड़की के सिर को उसकी बगल में बैठी स्त्री ने अपनी गोद में लिया हुआ है। पुरुष एक-दो बार लड़की के पैर को उस सुंदर प्लास्टिक कुर्सी से नीचे करने की कोशिश करता है, लेकिन लड़की उतनी ही बार पैर ऊपर कर लेती है। इस तरह सिटी स्कैन सेंटर के प्रतीक्षा कक्ष की तीन कुर्सियाँ इन लोगों ने छिका रखी हैं।

कई घंटों बाद गाढ़े रंग के फूलों की सिंथेटिक साड़ीवाली स्त्री उठी। उसने झोले में से एक संतरा निकाला और उसकी फाँक का रस लड़की के मुँह में डालने लगी। लड़की मुँह बना रही है, जैसे कुछ कड़ुवा खा रही हो। जैसे बुखार में सब कड़ुवा हो गया हो। लड़की इनकार नहीं कर रही। इनकार करने की हिम्मत में वह शायद नहीं होगी। लँगड़ाता लड़का इस बीच गोदी से उतर आया है। और संतरा झपटने लगा है। 'न रे' कहकर स्त्री उसे दो-तीन फाँक पकड़ा देती है और फिर लड़की का सिर सीधा करके कुर्सी पर टिका देती है। 'पानी देना चाहिए' वह सोचती है। अचकचाकर स्त्री उठी और शीशे का दरवाजा खोलकर बाहर आ गई। इधर-उधर नल खोजने का प्रयास करके फिर अंदर आ जाती है। स्त्री उदास आँखों से सिटी स्कैन सेंटर के अहाते में ही दवा की दुकान की तरफ देख रही है, जिसमें पानी की बंद बोतलें किन्हीं कंपनियों के नाम चिपकाए खड़ी हैं। बगल में रखा एक फ्रिज दिख रहा है। स्त्री देख रही है कि वह वहाँ जाए कि न जाए? वह उठ नहीं पा रही है। इस उठ न पाने के क्रम में वह पुरुष की तरफ देखती है। पुरुष भी दुकान की तरफ देख रहा है। इतने बड़े शहर में दूर-दूर तक सड़क किनारे कहीं पानी का नल नहीं है। चौड़ी सड़कें हैं यहाँ। बड़ा बाजार है आगे। नल नहीं लगाया गया या कि लगाया जाता है, पर लोग जरूरत के मारे हैं। उखाड़ ले जाते हैं। कौन उखाड़ ले जाता है? नलकूप विभागवाले? गुंडे लोग? क्या जाने? कोई तो होगा। गुंडे लोगों को, नलकूप विभाग वालों को कहीं पानी पीने की जरूरत नहीं पड़ती? नहीं न! उसी को बेचकर पानी की बोतल खरीद लेते हैं...।

अवधा दुकान की तरफ देख रहा है। पानी की बोतल की तरफ देख रहा है।

'आपका नंबर है।'

अचानक अवधा अपने पूरे परिवार के साथ चौंक पड़ा। इतनी मधुर आवाज किसी नर्स की हो सकती है! वह पूरे दिल से आभारी हो गया और दिल से नर्स का आदर करने के लिए उठकर खड़ा हो गया। नर्स ने इस पर ध्यान नहीं दिया और फिर एक बेहद मुलायम-सी आवाज निकालकर रानी को आदेश दिया - 'लड़की को लेकर इधर आइए। इंजेक्शन लगाना है। इससे सो जाएगी, तब स्कैन करेंगे।'

इंजेक्शन लग गया है। लड़की उहूँ-उहूँ करके रो पड़ी। अवधा काउंटर पर पैसे जमा करके लौटा। पूरे हजार रुपये। सिटी स्कैन के हजार रुपये। 'हजार रुपये' उसके दिमाग में बज रहा है। सरकारी अस्पताल के डॉक्टर ने साफ-साफ कह दिया है - स्कैन कराओ, किसी अच्छे अस्पताल में दिखाओ। सिर में चोट लगी है। जहरीले खाने के असर से अभी तक नहीं उबरी है। डॉक्टर ने तो एक अस्पताल और डॉक्टर का नाम-पता लिखकर भी दिया है। भला हो डॉक्टर का कि उसने उसे यहाँ भेजा। वहाँ की फीस अलग, यहाँ की अलग, दवा के पैसे अलग... पग-पग पर...।

'हजार रुपये।'

वह धीरे से स्त्री के पास आकर बुदबुदाया।

'हजार रुपये।' स्त्री दोहराती है।

'दो दिन उधर ही चले गए। अस्पताल में। देखो कितना दिन और खिंचेगा?'

'कल चली जाना।'

'हाँ, नहीं तो नौकरी गई ही समझो।'

बहुत चिंता में आपस में कुछ इसी तरह धीरे-धीरे बुदबुदा रहे थे दोनों कि इतने में बगल की कुर्सियों में बैठे लोगों में हलचल होती है। एक छोटी-सी लगभग दो साल की बच्ची, जिसने पैरों में घुँघरूवाला पायल पहन रखा है, नींद से उठ गई है और एक हाथ में बिस्किट पकड़े पूरे प्रतीक्षा कक्ष में घूम रही है। वह घूम रही है तो उसकी घुँघरूवाली पायल रुनझुन रुनझुन बज रही है। लड़की गोरी-गोल मटोल-सी है। प्रतीक्षा कक्ष के एक कोने में ऊपर की तरफ रखा एक टीवी चल रहा है। उस पर धुआँधार न जाने किस चीज का प्रचार आ रहा है। लँगड़ाता लड़का स्कैन सेंटर के चॉकलेटी टाइल्सवाले फर्श पर बैठा मंत्रमुग्ध-सा टीवी देख रहा है।

उधर स्त्री की आँखों में एक नन्ही-सी लड़की की अकड़ी हुई देह पड़ी थी। अस्पताल की जाने कैसी-कैसी दवाओं से दूध सुखाना पड़ा था उसे। लगता है अब तक स्तन में गाँठें पड़ी हुई हैं। जाड़े की रात थी वह। पास ही एक पेड़ काटकर ईंट-पत्थर के पेड़ों के लिए जगह बनाई गई थी। इस पेड़ की कुछ टहनियाँ अवधा उठा लाया था। उसने अँगीठी में आग जलाई थी। पतली टहनियाँ सूखी थीं और चिनगारी उछालकर जल रही थीं। आग जब बुझने लगती तो उसमें फिर कुछ छोटी-छोटी टहनियाँ डालकर उसे जलाए रखने की कोशिश होती। उस रात मानो अँगीठी का जलते रहना जरूरी हो गया था। नन्ही-सी लड़की, जिसे हफ्ते भर का होने पर ही छोड़कर रानी को काम पर जाना पड़ रहा था। वह तेज बुखार में थी। अब वह दो महीने की हो चुकी थी। अब जब उसके बढ़ते जाने की उम्मीद बढ़ गई थी, तभी वह तेज बुखार में घिर गई थी। निमोनिया था या शायद डबल निमोनिया। गुनगुने ताप में बाकी बच्चे नींद में थे, जिन्हें जगने के बाद यह बेहद अविश्वसनीय लगा था कि कोई जो अभी था, अभी नहीं हो सकता था। रात भर जो नन्ही माँ की गोद में थी। रात भर माँ जिसे दवा पिलाती रही थी। रात भर माँ जिसके लिए मन्नतें माँगती रही थी, वह अब नहीं थी। अवधा अनिश्चित-सा इधर-उधर खड़ा था। स्त्री रो रही थी। रात भर का श्रम बेकार हो गया था। लोग काम पर जाने के पहले इकट्ठा हुए थे।

'जीवित होती तो इसी के बराबर होती। इस प्यारी बच्ची के।' उसके मन में ममता उमड़ी और उसने हौले से हाथ बढ़ाकर बच्ची को छू लिया।

'इधर आओ।'

तत्काल ऐतराज करती आवाज ने बच्ची को खींचा।

स्त्री थोड़ा घबराई। अपनी खिसियाहट छिपाने के लिए उसने अपनी साड़ी का पल्ला थोड़ा-सा ठीक किया। लड़की की तरफ देखा। वह नींद में जा चुकी थी। लड़का अभी भी मंत्रमुग्ध-सा टीवी देख रहा था। टीवी पर अब कोई गाना बज रहा था। छोटी बच्ची के मन को भाया गाना। वह वहीं अपनी माँ के पास खड़े-खड़े नाचने लगी। घुँघरू रुन-झुन रुन-झुन। स्त्री हँस पड़ी। अवधा जो इतनी देर से चुप बैठा सामने की दुकान में रखी पानी की बोतलों को घूर रहा था, वह भी हँस पड़ा। प्रतीक्षा-कक्ष में बैठे लोग भी हँसे। पर जल्दी ही अवधा और स्त्री चौंक पड़े कि सारे कक्ष में मानो वे अकेले ही हँस रहे हैं। हँसते हुए लोग कब के चुप हो चुके थे या कि वे हँसे ही नहीं थे? या कि वे एक बेहद शालीन हँसी हँसे थे। ऐसी हँसी, जो होती है पर सुनाई नहीं पड़ती। पर वे, वे तो हँस पड़े थे और हँसे जा रहे थे। सजग होकर दोनों ने अपने मुँह बंद कर लिए पर हँसी थी कि

उनके कलेजे में जाकर बजने लगी। इतना बजने लगी कि वे हँसते-हँसते रोने लगे। स्त्री ज्यादा रोने लगी। अवधा रुक-रुक कर। उनके इस हँसने और फिर रोने की तत्काल प्रतिक्रिया हुई। बेहद मधुर बोलनेवाली रिशेप्सनिस्ट ने डपटकर कहा - 'शोर न मचाओ। पेशेंट्स हैं।'

इसी के बाद लड़की को लेकर स्कैन के लिए अंदर जाने का वक्त भी आ गया।

'क्या बात है मास्साब! आज खाना नहीं बन रहा?'

अवधा ने थके स्वर में, पेड़ के नीचे ऐतिहासिक बेंच पर बैठे ब्रजनंदन मास्टर की तरफ ये शब्द ढरका दिए।

'अब हमने बनाना बंद कर दिया है। अब तुम्हीं बताओ, बनाने में हमारी क्या गलती? जैसा अनाज आएगा, वही तो हम बनाएँगे। अपनी जेब से तो नहीं न खिलाएँगे।' ब्रजनंदन कुछ भड़ककर बोले।

'जाने उस दिन क्या खिला दिया बच्चों को...'

स्टोरनुमा कमरे से पेड़ की तरफ आते हुए हेड मास्टर साहब ने निःश्वास छोड़ते हुए कहा। हालाँकि यह बात अवधा को कहनी थी। बल्कि वह शुरू ही इस वाक्य से करना चाहता था, लेकिन ब्रजनंदन जी का उखड़ा हुआ चेहरा देखकर उसके मुँह से अनायास दूसरा वाक्य निकल गया।

'अरे नहीं मास्साब!'

हालाँकि अवधा यह भी नहीं कहना चाहता था। वह ऐसी सहानुभूतिपूर्ण बातें कहने के लिए आया भी नहीं था। लेकिन यहाँ उन्हीं के पक्ष में बोल निकले जा रहे हैं। उनके लिए, जिन्हें इतने दिन उसने दुश्मन की तरह देखा, सोचा, विचारा था 'सब खुद खा जाते हैं। बच्चों को सड़ा-गला दे देते हैं।' जैसा कुछ। 'सरकारी पैसा हजम कर जाते हैं' जैसा कुछ भी।

'हम गरीबों का कितना नुकसान किए आपलोग, जानते हैं? उस दिन का कुछ जाँच हुआ कि नहीं? जाँच हुआ तो क्या पता चला?' जैसा कुछ भी।

'सुनो अवधा! प्रति बच्चा एक रुपया है सरकार की तरफ से। एक रुपया में खाना मिल सकता है आज के जमाने में? तिस पर लोग ऊपर भी बैठे हैं खाने के लिए। उस एक रुपये में से दस पैसा बचता है यहाँ आते-आते। दस पैसा प्रति बच्चा। कैसा गेहूँ भेजेंगे,

तुम्हीं बताओ? दस पैसा में एक बच्चा को खिलाया जाएगा? तुम्हीं बताओ? कैसा रामराज्य आ गया है!'

अवधा चौंक गया। प्रति बच्चा एक रुपया! प्रति बच्चा दस पैसा! ब्रजनंदन जी अभी तक तमतमाए बैठे हैं।

'ठीक कहते थे हेड साहब। क्या आता है हमारे हिस्से? ऊपरवाले कुछ छोड़ते हैं? चीनी आती है। सड़ी गली चीनी। रोड़ा नमक आता है। कितना गंदा... मुसीबत पड़े तो हमारे सिर... हमने किया है ये बंदोबस्त...?'

ब्रजनंदन जी जाने क्या-क्या बोले जा रहे थे। हेड साहब चुप। अपनी चिर परिचित चारपाई पर बैठे हुए। अवधा के कान में कुछ नहीं जा रहा। सिर्फ प्रति बच्चा एक रुपया, प्रति बच्चा दस पैसा गूँज रहा है। वह हिसाब लगा रहा है। तीस दिन के तीस रुपये, तीस दिन के तीन सौ पैसे।

'अवधा, अब तुम्हें क्या बताएँ। कितनी मुश्किल से पकाते थे हम... हमने बंद कर दिया। शिवचरन भी तो बीमार हो गए थे। मार उल्टी-दस्त। अभी तक सेहत नहीं सुधरी है। खुद बड़े लोग जाने क्या-क्या करते हैं, कौन जाने? पाप सब हमारे सिर।'

क्या बोले अवधा? उसे तो सूझ ही नहीं रहा। आखिरकार उसने मन भर हिम्मत बटोरकर कहा - 'हमारा तो काम-धाम छूट गया मास्साब। कोई दूसरा मजूर रख लिया ठेकेदार ने। चलिए, हमारा तो छुट्टा काम था। फिर मिल जाएगा। लेकिन उनका तो छूट गया। सिर्फ तीन दिन ड्यूटी पर नहीं जा पाई थीं। इसी बीच क्या-क्या हो गया फैक्ट्री में। हड़ताल शुरू हो गई। मजदूर और मालिक में लड़ाई हो गई। अब जब पूछने जाती हैं तो कहते हैं उनको तो हटा दिया गया है। कैजुअल लेबर में यही तो रिस्क है मास्साब। एक आदमी हटा नहीं कि दूसरा झट से जगह झपट लेता है। फैक्ट्रीवालों को क्या फरक पड़ता है...'

वह तैश में आने लगा था कि हेड साहब उठ गए। हेड साहब उठ गए तो उसे बुरा लगा। उसकी बात भी पूरा नहीं सुनना चाहते। उसने अपने पैंट की कई पॉकेटों में से एक में रखी बीड़ी निकाली और माचिस से उसे सुलगाने लगा।

'अवधा, हेड साहब परेशान हैं। उसी सब चक्कर में इनका ट्रांसफर कर दिया है। बड़े बीहड़ में। स्कूल की बिल्डिंग तक नहीं है वहाँ। जा रहे हैं। किससे गुहार करें?'

'क्या!' अवधा सन्न! तो वह अपनी शिकायत किससे करे?

'हम किससे कहें मास्साब? सब गड़बड़ हो गया हमारा तो। कितना कर्जा चढ़ गया।'

'ये लीजिए।'

इतने में एक छोटा-सा लड़का हाथ में तंबाकू का एक पैकेट लिए आता है।

'अंकल भेजे हैं।' पानवाले की तरफ इशारा करके कहता है।

पानवाला अपनी गुमटी में से ही चिल्लाता है - 'अरे, कुछ सोचेंगे भी मास्साब! इतना पढ़ के क्या कर रहे हैं? रास्ता निकालिए। अपने लिए भी, सबके लिए भी।'

मास्टर साहब अचंभित हैं। तो पानवाला जानता है कि वे कितने पढ़े-लिखे हैं! तो पानवाले को उनसे उम्मीद है! अब तक वे जान क्यों नहीं पाए कि कुछ लोग हैं, जो उनसे, उन जैसों से उम्मीद भी करते हैं!

'न्याय किसे मिलता है मूरख? अरे यहाँ तो देश के प्रधानमंत्री तक का केस नहीं सुलझता...।'

अवधा फिर सन्न रह गया। क्या कह रहे हैं हेड साहब? उसने तो कभी ध्यान ही नहीं दिया कि इन लोगों का मामला भी नहीं सुलझा!

उधर हेड साहब खुद से चौंक गए। अचानक वे कौन-सी भाषा बोलने लगे थे। उनके दिल से ये क्या निकला। इतना तो आत्मसात किया उन्होंने इस व्यवस्था को, तब भी क्या बचा रह गया, उनके भीतर! पढ़ते थे तो कितने सपने बजते रहते थे उनके अंतर्मन में। सोचते थे तमाम चीजें ठीक कर ले जाएँगे। लेकिन जैसे-जैसे हकीकत से सामना होता गया। अपने खाने-पीने का जुगाड़ सबसे बड़ा हो गया। समझौता करते चले गए। यही नौकरी किस मुश्किल से मिली है, वही जानते हैं। कौन मानेगा कि वे पी-एच.डी करके यहाँ पेड़ के नीचे चारपाई बिछा कर प्राइमरी पाठशाला की मुदर्रिसी कर रहे हैं। नौकरी में समझौता, शादी में समझौता, बच्चों की पढ़ाई में समझौता... हासिल क्या हुआ? यही बेवक्त का ट्रान्सफर और बदनामी और पाप। बच्चों के कलेजे से निकला शाप। अकेले भागी हैं वे इस पाप-शाप के? क्या किए चले जा रहे हैं वे?

'हमें भी दंड मिलेगा भाई। तय था। तय रहा है। जब ट्रान्सफर के लिए चिट्ठी लिखते थे, तब मिला नहीं। अब बदनाम करके यहाँ से भेज रहे हैं। मिड सेशन में भेज रहे हैं। हमारे भी बाल बच्चे हैं। वहाँ कहाँ पढ़ेंगे? कमरा तक नहीं है स्कूल का। यहाँ पढ़ाएँ

बच्चों को। खुद वहाँ रहें। बताओ, एक मास्टर दो-दो जगह का खर्चा उठा सकता है? अपने को बचाने के लिए हमें भगा रहे हैं। हम समझ नहीं रहें हैं क्या?'

'पैसा चाहिए, हमारे पास आइए।' आसान लोन, किस्तों में वापसी। बड़ी-सी होर्डिंग चमक रही है। पान की गुमटी के ठीक बगल में। कब लगी यह? गुमटी में एक छोटा-सा टी.वी. है। बित्ता भर का। तेज-तेज बज रहा है। क्रिकेट चल रहा है। कुछ लोग गुमटी के सामने ऐसे ही खड़े हैं। क्रिकेट देखने के लिए तंबाकू खरीद रहे हैं या तंबाकू खरीदते हुए क्रिकेट देख रहे हैं। बीच-बीच में आती विज्ञापन की आवाज बिखर रही है।

इतने में यह भी होता है कि बेसिक शिक्षा अधिकारी स्कूलों में जाकर खाद्यान्न का बोरा सील करने लगते हैं। बोरा सील करते हुए उनकी तस्वीर अखबार में छपती है। एक अखबार ने इसे किसी खास पार्टी से जोड़कर उछाल दिया है तो दूसरे अखबार ने इसे बेसिर-पैर की उड़ी खबर मान लिया है और 'मिड-डे-मील' की वजह से कहीं भी, किसी भी जगह हुए हादसे इनकार कर दिया है। जो बच्चे बीमार थे, वे झोंपड़पट्टी जैसी जगहों से जुड़े थे और कहीं और बँट रहे खैरात के खाने पर टूट पड़े थे। खाने को किसी विषैले जंतु ने विषाक्त कर दिया था, जिसे कोई देख नहीं पाया था और अनजाने में इस तरह की कोई घटना घटित हुई। इस प्रकार इसकी जिम्मेदारी किसी की नहीं बनती। जबकि सबसे तेज चैनलवालों ने दिन-रात इस घटना के स्थान और वही एक दो-घर, पान की गुमटी, हलवाई की दुकान, घर से बुलाए गए स्वस्थ दो बच्चों के सवाल-जवाब दिखा रहा था। चौबीसों घंटे। वही सवाल, वही जवाब।

यह देश का इतना बड़ा नगर है। नगरपालिका की इतनी बड़ी व्यवस्था है यहाँ। बावजूद इसके, ब्रजनंदन जी यह शिकायत करते रहते हैं कि बारिश में खुली, उथली नालियों का पानी स्कूल में भर जाता है। इतनी गंदगी में बैठा नहीं जाता। तिस पर न जाने कितने छोटे-छोटे घरों के दरवाजे ठीक नाली पर खुलते हैं। एक पैर नाली के इस पार रखो और दूसरा दरवाजे के अंदर। अमूमन ब्रजनंदन जी की बात पर कोई गौर नहीं करता। बस पान वाला बीड़ा देते हुए सिर हिलाता जाता है। कभी-कभी कह भी देता है -'ऐसा ही है मास्साब।' या 'बिल्कुल ठीक मास्साब।'

उधर बेशकीमती कपड़े पहने एक आदमी अमेरिका में सोकर उठता है। उसे अचानक ही खयाल आता है कि विकासशील देश बच्चों पर ध्यान नहीं दे रहे। वह देखने लगता है कि कौन-सा बच्चा सबसे दयनीय है? वह हिंदुस्तान आकर स्कूलों को कंप्यूटर बाँटने लगता है...।

अचानक स्टोरनुमा कमरे में पड़ी खँचिया और झोले के ऊपर अखबार पड़ जाता है। उस पर एक पतला गद्दा, मोटी-सी चादर और एक जोड़ी पैजामा-कुर्ता रखा हुआ है। पेड़ के नीचे हेड साहबवाली कुर्सी पर कोई नेतानुमा आदमी आकर बैठ जाता है। पतीले में चुनाव से पहले पार्टी वर्करों का खाना बनने लगता है। ऐतिहासिक बेंच भूरे रंग से पेंट होकर नई लगने लगती है। प्लास्टिक की कई कुर्सियाँ पेड़ के नीचे लग जाती हैं। अवधा की तरफ पार्टी वर्कर बन जाने का ऑफर उछलता है। टूटी हवाई चप्पल वगैरह फेंक दी गई है। स्टोरनुमा कमरा एक तरह का पार्टी कार्यालय हो गया है। फोल्डिंग चारपाई अक्सर सामाजिक कार्यों में अर्थात कि नेतानुमा हेड की अनेक लीलाओं के उपयोग में आने लगती है। एक तकिया भी आ गया है, जो अक्सर कुर्सी पर ही रखा जाता है। इस तरह स्टोरनुमा कमरा स्टोर कम पार्टी कार्यालय कम शयनकक्ष कम स्कूल ऑफिस कम... जाने क्या-क्या बन गया है...।

कहीं से धुएँ की दुर्गंध साफ आ रही है।

अवधा की आँखों में धुआँ लग रहा है। हेड साहब की आँखें भी धुआँस रही हैं। वे अपनी आँखों को बार-बार पोंछ रहे हैं, जैसे कुछ उसमें से निकाल देंगे। ब्रजनंदन जी अखबार का एक टुकड़ा पकड़े पानवाले को सुना रहे हैं -

'मिड डे मील के दायरे में जल्द ही आठवीं कक्षा तक के छात्र आ जाएँगे... सरकार की नीति के अनुसार सेकेंड्री कक्षा तक के विद्यार्थियों को मिड डे मील मिलना चाहिए। इसके लिए अतिरिक्त 2300 करोड़ रुपये की माँग की गई है... मंत्रालय के एक अधिकारी के मुताबिक मिड डे मील का नतीजा काफी उत्साहजनक रहा है...।'

https://www.hindiadda.com/mid-day-meal/